|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 9: राजविद्याराजगुह्ययोग

3/3 (श्लोक 22-34), रविवार, 22 अक्टूबर 2023

विवेचक: गीता विशारद डॉ आशू जी गोयल

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/-Lymw_Et3Is

ईश्वर भक्ति एवम् उपासना का निरूपण

पारम्परिक दीप प्रज्वलन, गुरु वन्दना एवम् प्रार्थना के साथ आज के सत्र का प्रारम्भ हुआ। भगवान की असीम कृपा से हम लोगों का भाग्योदय हुआ है, हम अपने जीवन की सार्थकता हेतु भगवद्गीता पठन-पाठन एवम् आत्मसात् करने में लग गए हैं। पता नहीं हमारे कोई इस जन्म के पुण्य के कारण, कोई पूर्व जन्म के पुण्य थे, हमारे पूर्वजों के पुण्य थे या फिर किसी जन्म में किसी सन्त महापुरुष की कृपा दृष्टि प्राप्त हुई कि हम गीता जी में लग गए। आज नवरात्रि महोत्सव पर अष्टमी भी है। हमारी सनातन परम्परा में तीन मुख्य शाखाएँ, सम्प्रदाय या उपासना पद्धतियाँ हैं, शेष सब उसी की उपशाखा या उप सम्प्रदाय हैं:

1. शैव: इसमें शिव जी उपासना कैसे करनी है, इसका वर्णन है।
2. वैष्णव : विष्णु जी की उपासना कैसे करनी है, इसका वर्णन है।
3. शाक्त : देवी शक्ति की उपासना, आदि शक्ति उपासना की पद्धति मिलती है।

प्राचीन काल में देखने को मिलता है कि तीनों अलग-अलग प्रकार से चलता था लेकिन अभी तो आदि शङ्कराचार्य भगवान ने हमको वापस सनातन धर्म में स्थापित किया। गृहस्थों के लिए उन्होंने तीनों की उपासना अपने मन्दिर में करो, ऐसी आज्ञा कर दी, जो हम सभी करते है। तीनों को जानने के लिए अलग-अलग विस्तार से एक-एक को जानना होगा।

शैव सम्प्रदाय/ शिव उपासना को जानने के लिए शिव पुराण पढ़ना चाहिए, वैष्णव सम्प्रदाय की परम्परा को जानना है तो विष्णु पुराण पढ़ना चाहिए और शाक्त सम्प्रदाय में देवी उपासना पद्धति को जानने के लिए देवी महापुराण पढ़ना चाहिए। ये तीन इसके मुख्य ग्रन्थ हैं, शेष बहुत सारे हैं।

आज नवरात्रि अष्टमी को हम देख रहे हैं। नवरात्रि हमारी परम्परा में विशेष हो गई है, नौ दिन भक्ति काल। इसमें माँ दुर्गा सप्तशती के पाठ का विधान है किन्तु दुर्गा सप्तशती कोई अलग ग्रन्थ नहीं है। जैसे रामचरितमानस में सुन्दरकाण्ड का पाठ किया जाता है, उसी प्रकार दुर्गा सप्तशती मार्कण्डेय पुराण में आती है। भगवद्गीता जैसे महाभारत का अङ्ग है, ठीक उसी प्रकार यह मार्कण्डेय पुराण का अङ्ग है। शक्ति उपासना के बारे में लोगों की धारणा ऐसी है कि, जिसको संसार के भोगों की प्राप्ति करनी हो उसे शक्ति उपासना करनी चाहिए, यही धारणा प्रचलित है। चाहे संसार के भोग चाहिए या ब्रह्म, दोनों उपासना में इसका उतना ही महत्त्व है और उतना ही उपयोग है।

दुर्गा सप्तशती में हम देखते हैं, जो राजा सूरथ की कथा आती है, वह संसार प्राप्ति के लिए आती है और जो समाधि नामक वैश्य की उपासना है, वह भगवत् प्राप्ति के लिए आती है। विशिष्ट बात है कि नवरात्रि वर्ष में दो बार आती है। एक बार चैत्र मास में जिसे वासन्तिक नवरात्रि कहा जाता है और दूसरी आश्विन मास में जिसे शारदीय नवरात्रि कहते हैं। दोनों की दो विशिष्टताएँ हैं। चैत्र नवरात्रि की नवमी को हम भगवान राम का जन्म दिवस मनाते हैं और इसे राम नवमी कहते हैं। चैत्र की इस राम नवमी के दिन हम भगवान राम का प्राकट्य दिवस देखते हैं जबकि आश्विन की नवरात्रि के समापन पर हम विजयादशमी का उत्सव मनाते हैं यानि दशानन का हरण। एक नवरात्रि भगवान राम के प्राकट्य की और दूसरी असुरों के विनाश की। शक्ति की उपासना भी केवल सगुण भाव से ही नहीं की जाती बल्कि सगुण और निर्गुण दोनों भावों से की जाती है। सगुण भाव में हम माँ शैलपुत्री, माँ ब्रह्मचारिणी, माँ चन्द्र घण्टा, माँ कूष्माण्डा, माँ स्कन्ध माता, माँ कात्यायनी, माँ कालरात्रि, माँ महागौरी और माँ सिद्धिदात्री के रूप में करते हैं।

मानस में एक सुन्दर प्रसङ्ग आया है जब राम लक्ष्मण मिथिला में पधारे हैं तो सीता जी की अभिलाषा है कि भगवान राम ही हमें वर के रूप में मिलें तो उनकी माँ सुनयना ने कहा कि तुम जाओ गौरी स्तुति करो, आज जो अष्टमी है वह महागौरी स्तुति का पर्व दिवस है और सीता जी मन्दिर में जाकर माँ गौरी से प्रार्थना करती हैं:

देवि पूजि पद कमल तुम्हारे,सुरूर मुनि सब होहिं सुखारे।
मोर मनोरथ जानहुं नीके,बसहुं सदा उर पुर सबहीं के।।

गौरी जी की पूजन अर्चन से देवता, मनुष्य और मुनि गण आदि सभी प्रसन्न हैं। जो निर्गुण उपासना करते हैं और सगुण उपासकों के लिए भी दुर्गा सप्तशती के पञ्चम अध्याय में-

या देवी सर्वभूतेषु शक्ति रूपेण संस्थिता--

मैं किस रूप में आराधना करना चाहता हूँ? वहाँ चौबीस प्रकार के भाव दिए गए हैं, वैसे हम किसी भी भाव से उनकी उपासना कर सकते हैं। यहाँ वर्णन है कि शक्ति रूप, ज्ञान रूप, भक्ति रूप, ध्यान रूप, भाव रूप, बुद्धि रूप आदि में माँ देवी स्थित है और जो जिस भाव से उपासना करता है उसको वही भाव प्राप्त हो जाता है। किसी को गीता व्रती होना हो तो वह गीता व्रती रूप में समाविष्ट हो जाओ।

आज जब अष्टमी तिथि पर महागौरी का पर्व मना रहे हैं तो उनका चिन्तन करें और अभी हम नवें अध्याय का चिन्तन और विवेचन करने जा रहे है, उनमें भी वही है। बीस और इक्कीस श्लोक में भगवान ने वही बात कही है। भगवान ने बाईस, सत्ताईस और चौबीसवें श्लोकों में जो भाव व्यक्त किया है उसी भाव में हम कामना महागौरी से करें।

हे माता! संसार की जो कामनाएँ हम लोगों की भगवद् प्राप्ति के विषय में बाधक हैं, आपकी कृपा से, मङ्गल आशीर्वाद से, करुणा से हम लोगों की वासनाएँ दूर हो जाएँ। हमारी उन कामनाओं का हरण हो जाए और हम लोग; जो भी भगवद् भजन में बाधक बात है वह निकल कर भगवद् भजन में स्थिर हो जाएँ।

मूल बात एक और है, हमारे यहाँ पर्वों का बहुत महत्त्व है और उस समय विशेष प्रकार की क्रिया का फल भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है। साल के तीन सौ पैंसठ दिन हम कभी भी दान दे सकते हैं किन्तु सङ्क्रान्ति के दिन दान का जो फल बतलाया गया है उसका अन्य में उतना फल नहीं है। अलग-अलग पर्वों में जो दान होते हैं उनका भिन्न-भिन्न फल है। साधना तो हमको प्रतिदिन करनी होती है लेकिन इन नव दिनों की जो साधना है, चाहे वह आश्विन मास की नवरात्रि हो अथवा चैत्र मास की, उसका फल हजारों गुना अधिक है, इसलिए इन नव दिवसों को हमें तपोदिवस बनाने चाहिए जैसे:

1. मैं कम बोलूँगा
2. मैं कम खाऊँगा
3. मैं कम प्रवृत्ति करूँगा
4. मेरे मुख से एक भी झूठ नहीं निकलेगा

5. मेरे हाथ से कुछ सुकर्म होंगे
6. मैं गीता का अधिक पाठ करूँगा, आदि।

जो कर्म हम प्रतिदिन करते होंगे, इन नव दिनों यदि बढ़ा लिया तो बढ़ाएँगे थोड़ा किन्तु उसका हजारों गुना बढ़कर फल मिलेगा। ऐसी नवरात्रि की महिमा है। इन दिवसों में अधिक से अधिक भक्ति करना, शक्ति अर्जन करना चाहिए क्योंकि गृहस्थ जीवन में शक्ति की भी आवश्यकता है। ये नवरात्रि के दिन शक्ति सञ्चय के लिये भी बढ़िया और महत्त्वपूर्ण हैं। जो शक्ति की उपासना इन नव दिनों में करता है उसका तेज अलग ही होता है। उस तेज की भी आवश्यकता है। नवरात्रि जब भी आए हम विशेष नियम बनाएँ। अन्तिम दिन कन्या पूजन, हवन इत्यादि करते हैं किन्तु उन क्रियाओं मात्र में ही न फँसे। उनकी उपेक्षा करने की बात नहीं है किन्तु अपना चिन्तन यदि आध्यात्मिक उन्नयन के लिए करेंगे तो नवरात्रि काल का उपयोग हमारे लिए अत्यन्त लाभकारी होगा।

अब नवें अध्याय के शेष श्लोकों के विवेचन की ओर उन्मुख होते हैं।

9.22

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां(यँ), ये जनाः(फ्) पर्युपासते।
तेषां(न्) नित्याभियुक्तानां(यँ), योगक्षेमं(वँ) वहाम्यहम्॥9.22॥

जो अनन्य भक्त मेरा चिन्तन करते हुए (मेरी) भली भांति उपासना करते हैं, (मुझ में) निरन्तर लगे हुए उन भक्तों का योगक्षेम (अप्राप्त की प्राप्ति और प्राप्त की रक्षा) मैं वहन करता हूँ।

विवेचन: गीताजी के श्लोकों में जो कुछ श्लोक सबसे उत्तम माने जाते है, उनमें इस श्लोक का महापुरुषों ने बार-बार चिन्तन किया है। श्रीभगवान ने इसमें कुछ विशिष्ट शब्दों का उपयोग किया है। भगवान कहते हैं, हे अर्जुन! अनन्य प्रेमी, अर्थात् न अन्य।

अनन्य भक्ति के बारे में कई लोगों को बहुत भ्रम होता है। उनको लगता है मैं रामजी की भक्ति करता हूँ तो कृष्ण का नाम कैसे लूँ, कृष्ण की भक्ति करता हूँ तो देवी का नाम कैसे लूँ, देवी की उपासना करता हूँ तो शिव का नाम कैसे लूँ। यह नहीं है उसका मतलब, यह उसका एकदम गलत अर्थ है। अनन्य का अर्थ है एक इष्ट हो।

इसके लिए इष्ट शब्द को समझना होगा। दो शब्द हैं- एक है इष्ट और दूसरा है अनिष्ट। कुछ बुरा हो गया हो तो बोलते हैं अनिष्ट हो गया। भागवत जी का आमन्त्रण कार्ड आया होगा और आपने पढ़ा भी होगा। लिखा होता है, "इष्ट मित्रों के साथ पधारें"। इसका मतलब क्या भगवान के साथ पधारें, नहीं, इसका मतलब है जो अपने को चाहिए, जो अपने को अभिप्रेत है। अनिष्ट का मतलब जो अपने को अच्छा नहीं लगता।

जब नवरात्रि में दुर्गा माता की पूजा करते हैं और माता की पूजा बार-बार करके कहते हैं, माँ मुरादे पूरी कर दे, हलुवा बाँटूँगी। ऐसा कुछ गाते हैं; तो वहाँ पर इष्ट दुर्गा माता है या मुरादें हैं? शिव जी की सोलह सोमवार का व्रत किया कि मुझे अच्छे वर की प्राप्ति हो, तो इष्ट शिव जी हैं या वह वर है। जन्माष्टमी का व्रत किया, इस व्रत से मेरे अन्दर धन धान्य की वृत्ति हो, तो वहाँ इष्ट वे देव नही होते जिनकी उपासना होती है। उस देव की उपासना में जो हम चाहते हैं वह इष्ट हो जाता है और इसीलिए देवता नहीं प्राप्त होते हमको। हम जो कामना करते हैं वही इष्ट प्राप्त हो जाता है। किसी को धन चाहिए, किसी को पुत्र चाहिए, किसी को कारोबार, किसी को सत्ता, किसी को अच्छा स्वास्थ्य चाहिए। इस प्रकार ये जितने इष्ट हैं, ये सब हमे मूल इष्ट से दूर कर देते हैं। मेरे इष्ट कृष्ण हैं, मुझे उनकी भक्ति चाहिए, इष्ट राम हैं तो उनकी भक्ति चाहिए, इष्ट शिव हैं तो उनकी भक्ति चाहिए और यदि मेरी इष्ट माताजी हैं तो उनकी भक्ति चाहिए। ध्यान रखें जब हम भोगों की तरफ जायेंगे तो इष्ट बदलते रहेंगे और जब भगवान को केन्द्र बिन्दु मानकर भक्ति करेंगे तो इष्ट नहीं बदलते और इसलिए मीरा बाई ने कहा:-

मेरो तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोई।

दूसरो न कहने वाली मीरा, गुरु रविदास जी के पास जाती थी, साधुओं को भोजन कराती थी। दूसरा कुछ नहीं चाहिए ये बात सत्य है किन्तु उससे बाकी कर्मों पर अन्तर नहीं पड़ता। भोगों से हटकर हमारी दृष्टि इष्ट पर, भगवान पर हो जाए और इस प्रकार न अन्य का तात्पर्य भोग नहीं भगवान हो जाये।

अब भगवान कहते है, "नित्ययुक्ता" हम सबने कहा कि भगवान से भक्ति माँगते है किन्तु नित्य युक्ता का मतलब मेरी भक्ति स्थायी हो जाये। जब तेरी भक्ति चिरस्थाई हो जाय, कभी-कभी की न रहे। एक शिष्य ने अपने गुरु से कहा कि जब मैं नया-नया आया था तो आपने कहा था तेरा भाव बहुत अच्छा है किन्तु उसके बाद कभी नहीं कहा और भगवान भी नहीं मिले मुझे। गुरुजी ने शिष्य से कहा जैसा तुम उस समय थे वैसे अब नहीं हो और इसलिए दुबारा वैसा नहीं कहा:

जैसी प्रीति आरम्भ में, वैसी अन्त तक होय।
चला जाय बैकुण्ठ को, पल्ला पकड़े न कोय।।

गीता में आजकल बहुत मन लग रहा है, विवेचन में भी बहुत मन लग रहा है, क्या हमेशा लगेगा? एक महीना, दो महीना, छः महीना, एक साल, दो साल, पाँच साल, दस साल, बीस साल बाद भी ऐसे ही मन लगा रहेगा? चिरस्थाई लग जाय तब काम बनता है, वरना हम बोलते हैं, अरे हमने भी दो हजार इक्कीस में गीता परिवार ज्वाइन किया था और बड़ा मन लगता था, फिर बेटी को बेटा हो गया और तबसे बेटी के घर चली गई। फिर मौका मिलेगा तो कर लूँगी। किसी के कारोबार में, किसी के नौकरी में कुछ हो गया, किसी में कुछ हो गया।

जैसी प्रीति आरम्भ में, वैसी अन्त तक होय।।

अर्थात् जो मन अभी लगता है विवेचन, पूजा में, गीता पाठ में क्या अन्त तक वैसा बना रहेगा। भागवत में एक शब्द आता है भक्ति कैसी होनी चाहिए: **प्रतिक्षण वर्धनम्,** हर क्षण बढ़नी चाहिए और इसका मूल्याङ्कन करते रहना चाहिए। अगर उत्तरोत्तर सुधार नहीं कर रहे हैं तो ये निश्चित मानिए कि हम पीछे जा रहे हैं। भगवान ने कहा जो मेरी इस प्रकार अनन्य भाव से उपासना करता है, मैं उसका योग क्षेम स्वयं वहन करता हूँ।

यहाँ योग का तात्पर्य है जो अप्राप्त है उसकी प्राप्ति और क्षेम का तात्पर्य जो प्राप्त है उसका संरक्षण करना, जो आवश्यकता है उसे मैं सँभालता हूँ। शङ्का उठती है कि क्या भगवान वास्तव में योग क्षेम वहन करते हैं? इस सन्दर्भ में एक भजन गाते है:

तेरा रामजी करेंगे बेड़ा पार
उदासी मन काहे को करे ॥

नैया तेरी राम हवाले लहर
लहर हरि आप सम्हाले हरि
आप ही उठायें तेरा भार
उदासी मन काहे को करे ॥

काबू में मञ्झधार उसी के
हाथों में पतवार उसी के
तेरी हार भी नहीं है तेरी
हार उदासी मन काहे को करे ॥

सहज किनारा मिल जायेगा
परम सहारा मिल जायेगा
डोरी सौंप के तो देख एक बार
उदासी मन काहे को करे ॥

तू निर्दोष तुझे क्या डर है
पग पग पर साथी ईश्वर है ।
सच्ची भावना से कर ले पुकार
उदासी मन काहे को करे ॥

द्रौपदी ने कहा भगवन कितनी बार पुकारा आपको फिर भी नहीं आए? भगवान ने कहा साड़ी छूटने वाली नहीं थी, जब तूने छोड़ा तब मै आया। जब मैं आने वाला था और तूने चीत्कार आरम्भ किया, उसी समय तूने मुझे छोड़कर युधिष्ठिर को देखा, भीम की ओर देखा, अर्जुन की ओर देखा और फिर नकुल व सहदेव की ओर देखा, भीष्म पितामह, विदुर, धृतराष्ट् और पूरी सभा की ओर देखा। ये सब देखा था कि नहीं देखा था और फिर तूने सोचा कि मैं अप्रभावी हूँ। तूने अपनी पूरी शक्ति लगा दी और अपना पूरा जोर लगाकर पल्लू को रोकने का प्रयास किया लेकिन सामने दु:शासन था, जो बड़ा शक्तिशाली था और ज्यादा देर रोक न पाई। जब तूने अपनों का भरोसा छोड़ा, अपनी शक्ति का आश्रय छोड़ा और मुझे पुकारा, "कृष्ण बचाओ " मैंने तुरन्त पल्लू पकड़ लिया और तुम्हें बचा लिया। हम डोरी भगवान को सौंपते नहीं हैं।

जो डोरी सौंप देता है, उसका रामजी बेड़ा पार करते हैं। इसका ये मतलब नहीं है कि मेरी इच्छाएँ पूरी होंगी, बल्कि जो आवश्यकता है उसकी पूर्ति होगी। इच्छाएँ नहीं होंगी, श्रेयस मिलेगा, प्रेयस नहीं मिलेगा।

सहज किनारा मिल जायेगा,
परम सहारा मिल जायेगा ।

डोरी सौंप के तो देख एक बार,
उदास मन काहे को करे ॥

तेरा रामजी करेंगे बेड़ा पार।

9.23

येऽप्यन्यदेवता भक्ता, यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेऽपि मामेव कौन्तेय, यजन्त्यविधिपूर्वकम्।।9.23।।

हे कुन्तीनन्दन! जो भी भक्त (मनुष्य) श्रद्धापूर्वक अन्य देवताओं का पूजन करते हैं, वे भी मेरा ही पूजन करते हैं, (पर करते है) अविधिपूर्वक अर्थात् देवताओं को मुझसे अलग मानते हैं।

विवेचन: भगवान कहते हैं, हे अर्जुन! श्रद्धा से युक्त सकाम भक्त दूसरे देवताओं को पूजते है किन्तु उनका ये पूजन अविधि पूर्वक है। अब अगर देवताओं को पूजते हैं तो भगवान कहते है तुम मुझे ही पूजते हो, तो ये अविधि पूर्वक क्यों कहा गया, ऐसी शङ्का मन में आती है।

किसी के घर में चोरी हो गई तो प्राथमिकी लिखने थाने में जायेंगे और यदि आपका परिचय प्रधानमन्त्री, मुख्यमन्त्री आदि से है तो भी चोर की खोज तो थानेदार ही करेगा और ये कार्यवाही थाने में रिपोर्ट दर्ज कराने के उपरान्त ही होगी। थानेदार जो अपनी शक्ति का प्रयोग करता है वह उसे ऊपर से ही प्रधानमन्त्री, मुख्यमन्त्री, सरकार से ही प्राप्त है, इसलिए उस क्षण वह सर्वोच्च दिखता हुआ भी सर्वोच्च तो नही है। इसी प्रकार देवताओं का पूजन करना अच्छी बात है किन्तु उन्ही को सर्वोच्च मान लिया जाय यह गलत है। एक गृहस्थ जीवन में इसकी आवश्यकता है, किन्तु उसी को सब कुछ मान लेना ये अविधिपूर्वक पूजन है।

9.24

अहं(म्) हि सर्वयज्ञानां(म्), भोक्ता च प्रभुरेव च।
न तु मामभिजानन्ति, तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते।।9.24।।

क्योंकि सम्पूर्ण यज्ञों का भोक्ता और स्वामी भी मैं ही हूँ; परन्तु वे मुझे तत्त्व से नहीं जानते, इसी से उनका पतन होता है।

विवेचन: सम्पूर्ण यज्ञों का भोक्ता और स्वामी भी मैं ही हूँ, किन्तु इस प्रकार तात्त्विक दृष्टि से मुझे वे नहीं जान पाते और इसलिए वे पतन को प्राप्त होते हैं अर्थात् पुनर्जन्म के भागी बनते हैं।

9.25

यान्ति देवव्रता देवान्, पितॄन्यान्ति पितृव्रताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्या, यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्।।9.25।।

(सकाम भाव से) देवताओं का पूजन करने वाले (शरीर छोड़ने पर) देवताओं को प्राप्त होते हैं। पितरों का पूजन करने वाले पितरों को प्राप्त होते हैं। भूत-प्रेतों का पूजन करने वाले भूत-प्रेतों को प्राप्त होते हैं। (परन्तु) मेरा पूजन करने वाले मुझे ही प्राप्त होते हैं।

विवेचन: हे अर्जुन! यह नियम है कि देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं, भूतों को पूजने वाले भूतों को प्राप्त होते हैं और मेरा पूजन करने वाले मुझ को ही प्राप्त होते हैं और इसलिए मेरे भक्तों का पुनर्जन्म नहीं होता।

कभी कभी ये शङ्का उठती है कि देवताओं को पूजने से देवताओं को प्राप्त करते हैं और भगवान को पूजने वाले भगवान को प्राप्त करते हैं, तो क्या देवताओं की पूजा नहीं करनी चाहिए? यह एकदम गलत व्याख्या है। देवताओं की ही पूजन करते रहना और भगवान की भक्ति करना ही नहीं, यह गलत है। सोमवार को शङ्कर जी की पूजा, वृहस्पतिवार को वृहस्पति की पूजा, गणपति की पूजा करना आदि करते रहते है, संसार में फँसे रहते हैं, किन्तु भगवान की भक्ति नहीं करते हैं और भगवान कहते हैं कि यह अविधि पूर्वक हो गया। भगवान ने कहा कि देवताओं की पूजा, यज्ञ आदि का विधान मैंने ही बनाया है और इसको कदापि नहीं छोड़ना। इसको भगवान ने सात्त्विक कहा है।

उक्त से स्पष्ट है कि जो देवताओं की पूजा करते है, उन्हें भी श्रीभगवान ने सात्त्विक कहा। अब कुछ लोग अपने पितरों की, कुल देवी की ही पूजा करते हैं और कुछ नहीं करते। भगवान कहते है कोई बात नही वे पितृ लोक को पहुँच जाते हैं। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो श्मशान में बैठ कर पता नहीं कौन-कौन सी पूजा करते हैं, पशु बलि देते हैं, माँस का उपभोग करते हैं, शराब का उपभोग करते हैं। ऐसे भी देवता आपने देखा होगा जिन्हें बलि दी जाती है। भगवान ने कहा यह तामस है। जो उसे पूजेंगे उन्हें भूतलोक में जाना पड़ेगा, वैसी ही योनियों में जाना पड़ेगा क्योंकि इसका भी फल है।

देवताओं की पूजा करोगे तो स्वर्ग लोक में चले जाओगे, पितरों की पूजा करोगे तो पितृ लोक में जाओगे, भूतों की करोगे तो भूतलोक में जाओगे लेकिन देवताओं का पूजन करने के साथ तुम्हारी निष्ठा जब भक्ति में होगी तो परमात्मा की उपासना करने की माँग तुम्हारे अन्दर उत्पन्न होगी। देवता वास्तव में एक योनि है, जैसे मनुष्य हैं ऐसे देवता भी हैं। अब इन्द्र देव, वरुण देव आदि देवता देव योनि में हैं और हम मनुष्य योनि में। अब यहाँ प्रधानमन्त्री मोदीजी, मुख्यमन्त्री योगी जी आदि उच्च पोर्टफोलियो वाले हैं, स्वर्गलोक में जो जायेगा वहाँ वो देवता ही है और यहाँ मनुष्य की ही योनि होगी। हम उन्हीं देवताओं को जानते हैं जो उच्च पोर्टफोलियो वाले हैं, किन्तु ध्यान रखिएगा ये सब भोग योनि हैं। चाहे देवता बनेंगे या कुत्ता या कोई भी जानवर, दोनों ही भोग योनि हैं, कर्म योनि नहीं हैं। मनुष्य को ही कर्म योनि का सौभाग्य प्राप्त है।

देवताओं की भी एक आयु है, उन्हें उसे पूरा भोगकर मर्त्य लोक में आना पड़ेगा। ब्रह्मा जी की भी आयु सौ वर्ष है, उनके सौ वर्ष भले ही हमारे करोड़ों वर्षों के बराबर हों किन्तु भगवान की उपासना उस परम चैतन्य की उपासना है जिसकी कोई आयु नहीं है। जो न जन्म लेता है और न जिसकी मृत्यु होती है, इसलिए न उसका आदि है न अन्त। उस परब्रह्म की उपासना मुख्य बात है और अब भगवान अपनी सगुण साकार उपासना का अगले श्लोक में विशेष उल्लेख करते हुए कहते है।

9.26

पत्रं(म्) पुष्पं(म्) फलं(न्) तोयं(यँ), यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं(म्) भक्त्युपहृतम्, अश्नामि प्रयतात्मनः॥9.26॥

जो भक्त पत्र, पुष्प, फल, जल आदि (यथासाध्य एवं अनायास प्राप्त वस्तु) को प्रेमपूर्वक मेरे अर्पण करता है, उस (मुझमें) तल्लीन हुए अन्तःकरण वाले भक्त के द्वारा प्रेमपूर्वक दिये हुए उपहार (भेंट) को मैं खा लेता हूँ अर्थात् स्वीकार कर लेता हूँ।

विवेचन: हे अर्जुन! मेरे पूजन में सुगमता है क्योंकि मेरा भक्त प्रेम से पत्र, पुष्प, फल, जल आदि जो भी अर्पण करता है, उस शुद्ध बुद्धि भक्त का अर्पण किया गया पत्र, पुष्प आदि मैं सगुण रूप से प्रकट होकर स्वीकार करता हूँ।

दुर्वासा ऋषि का उदाहरण है, जहाँ द्रौपदी के भोजन पकाए पात्र में शाक के बचे मात्र एक पत्र से उनके दस हजार साधुओं को भोजन कराया। गजेन्द्र का कमल पुष्प भगवान ने स्वीकार किया और उसके द्वारा स्तुति करने पर प्रकट होकर छुड़ाया। शबरी के जूठे बेर भी भगवान ने प्रेम पूर्वक खाये।

पन्द्रहवीं शताब्दी में एक सत्य घटना हुई। राजस्थान के टोक जिले में धौला कुआँ एक गाँव है। वहाँ धन्ना जाट रहा करता था। वह बहुत भोला और अड़ियल था। उनका एक बड़ा भाई था जिसने बँटवारा करके उन्हें अलग कर दिया और धन्ना के हिस्से में माँ और एक गाय आई। बड़े भाई ने सब कुछ ले लिया। जब मन्दिर के पुजारी पण्डित जी को पता चला कि धन्ना जाट के हिस्से में एक मोटी ताजी गाय आई है, उनको लालच हुआ। उन्होंने सोचा ये भोला सा जाट है, जाकर रोज के लिए दूध का जुगाड़ कर लेता हूँ। पण्डित जी पहुँच गए धन्ना के पास और कहा कामधेनु गाय तुम्हारे हिस्से में आई है तथा मन्दिर में जो भगवान हैं वह तुम्हारी ही गाय का दूध पीते हैं और मैंने सोचा दूध चढ़ाने के लिए तुम दोगे या नहीं दोगे?

धन्ना ने कहा आप कैसी बात करते हैं? मेरी गाय का दूध भगवान पीते हैं तो मेरे लिए इससे बढ़कर क्या सौभाग्य की बात हो सकती है। आप एक लोटा नही बल्कि दो लोटा ले लीजिए। उसे यह सोच कर मन में बड़ी प्रसन्नता होती थी कि भगवान मेरी गाय का दूध पीते हैं। वह भोला है, सरल भाव वाला है। ये क्रम वर्षों तक चला। एक समय ऐसा आया कि पण्डित जी को चार-पाँच दिन के लिए बाहर कहीं जाना था तो सोचा धन्ना को मना कर दूँ कि चार-पाँच दिन दूध नहीं देना है। वे धन्ना के पास आए और कहा, धन्ना मुझे बाहर जाना है, आप को दूध नहीं देना है। धन्ना ने कहा आप बाहर जा रहे हैं, भगवान को तो नहीं जाना है। वे चार-पाँच दिन भूखे रहेंगे! आप कैसी बात करते हैं? पण्डित जी ने सोचा फँस गए, तो धन्ना ने कहा कि मैं दूध पिला दूँगा। तब पण्डित जी ने कहा गर्भ गृह में और कोई प्रवेश नहीं कर सकता। धन्ना ने कहा क्या भगवान भूखे रहेंगे? मैं आपको जाने नहीं दूँगा। अब जाट अड़ गया और पण्डित जी बड़े असमञ्जस में पड़ गए। पण्डित जी ने कहा कि मैं प्रतीक रूप में जो भगवान हैं, उन्हें तुम्हें लाकर देता हूँ और यहीं अपने आप भोग लगा देना। धन्ना ने कहा ठीक है, ऐसा कर लो। पण्डित जी ने एक पत्थर का शालिग्राम चन्दन टीका लगाकर दे दिया। धन्ना ने देखा इतने छोटे भगवान हैं, ये कितना दूध पी लेंगे, एक लोटा दूध कैसे पी पाएँगे? पण्डित जी ने कहा तू भगवान के बारे में ऐसी बातें करता है। धन्ना ने कहा, नहीं महाराज ऐसी बात नहीं है। पण्डित जी ने कहा किस विधान से दूध पिलाना है, मैं बताता हूँ।

सुबह उठकर खुद नहाना, भगवान को नहलाना, भगवान को तिलक लगाना और फिर भगवान को भोग लगाना, भोग लगाते समय पर्दा करना। इस प्रकार सौ- पचास नियम बता दिए उसे। पण्डित जी जो नियम खुद भी अनुसरण नहीं करते थे, वे भी सब नियम बता दिए, कि धन्ना एक बार कह दे कि मुझसे नहीं होगा आप ले जाइए भगवान को। लेकिन वह भोला था, पक्का भक्त था। धन्ना ने बड़े भाव से विग्रह को अपने हाथ में लिया, भावुक होकर कहा भगवान मेरे पास आ गए और माँ को भी जाकर बताया कि देखो भगवान मेरे पास आ गए। वह रात भर भगवान के पास बैठा रहा और भगवान को निहारता रहा। सुबह पाँच बजे उठकर खुद स्नान किया और भगवान को भी स्नान कराया तो भगवान का चन्दन उतर गया। अब इसको ये भी पता नहीं चन्दन होता कैसा है। उसने फिर मिट्टी का तिलक लगाया। माँ ने भोग बनाया और थाली लेकर धन्ना ने भगवान के पास रखी। उसको लगा अब इधर से हाथ निकलेगा, उधर से हाथ निकलेगा किन्तु कोई हाथ नहीं निकला। सोचा कुछ गड़बड़ हो गई। अरे! पर्दा हमने नहीं लगाया तो चादर लगा दिया, जो फटा था तो उस तरफ पीठ करके बैठ गया जिससे भगवान को खाते समय देख न सके। थोड़ी देर में देखा, अभी खाया कि नहीं। घण्टा दो घण्टा हो गया, दस बज गए। माँ ने कहा, अभी तक तूने

भोग नहीं लगाया। धन्ना ने कहा क्या करें! भगवान खाते ही नहीं। माँ ने कहा हो गया, अब तुम थाली उठा लो और तुम भी खा लो। धन्ना बोला माँ तू कैसी बात करती है, पण्डित जी ने कहा है भोग लगाने के बाद ही खाना है। माँ ने कहा भगवान खाने थोड़े ही आयेंगे, भगवान को ऐसे ही भोग लगाते हैं। माँ तुम ये कैसी बातें कर रही हो, पण्डित जी एक लोटा दूध प्रतिदिन पिलाते हैं और अपने घर का खाना भी खिलाते हैं। माँ ने सोचा ये तो मानने से रहा और चली गईं। दोपहर का दो बज गया, तीन बज गया और शाम भी हो गई। धन्ना भगवान से बातें करता है और माँ के पास जाता है, कहता है माँ ये खाना ठण्डा हो गया इसलिए भगवान खाते नहीं। दूसरी ताजी और गरम थाली ले जाता है और भगवान के पास रखी, फिर पर्दा लगाया और पीठ फेरकर बैठ गया। रात के ग्यारह बज गए, भगवान ने खाया नहीं। रोता है, कमी वेशी हो गई हो तो क्षमा करो भगवान, खा लो। आज तो उसका निर्जल उपवास हो गया और वहीं सो गया। सुबह उठा स्नान किया, भगवान को स्नान कराया और फिर से थाली लेकर आया, रोते-रोते कहा, भगवान खा लो। फिर रात हो गई और वहीं दुबारा सो गया। सुबह फिर उठा और उसे दुर्बलता आ गई, फिर भी माँ के पास गया और दूसरी थाली ले आया, भोग लगाया।

तीन दिन हो गये किन्तु भगवान ने नहीं खाया। ये छठवीं थाली थी और अन्त में धन्ना ने कहा मैं जाट हूँ इसीलिए मेरे हाथ का नहीं खा रहे हो भगवान। तुम केवल पण्डित के हाथ से खाते हो, मैं समझ गया। पण्डित ने मुझे बताया था कि मेरे ही हाथ का खाते हैं भगवान, किसी और के हाथ का नही खाते। मैं अपने शरीर का अब क्या करूँगा? जब जाट के शरीर से भगवान भोजन ही नहीं स्वीकार करते और यह कहकर भावावेश में उसी शालिग्राम के पत्थर में अपने सिर को मारा। पहले सिर मारा तो चोट लगी , दूसरी बार खून निकला और तीसरी बार सिर मारते ही भगवान ने अपने दोनों हाथों से पकड़ लिया और भगवान के दर्शन धन्ना को हो गए। उसने पूछा भगवान से, कहाँ रह गए थे, तुम तो सर्वशक्तिमान हो। मैं तीन दिन से कोशिश कर रहा था। भगवान ने कहा मैं देख रहा था तुम्हारी भक्ति।

भगवान ने स्वयं भोजन किया और धन्ना को भी अपने हाथ से खिलाया और कहा जाता है कि कई दिनों तक ये क्रम चलता रहा। लौटकर पण्डित जी आए तो ये खबर पूरे गाँव में फैल चुकी थी। यह सुनकर पण्डित जी के मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया और सोचा मैं कितना पापी हूँ? मैं भगवान के विग्रह में पत्थर देखता रहा किन्तु धन्ना ने पत्थर में भगवान को देखा और उसको भगवान के दर्शन हो गए। पण्डित जी ने जाकर धन्ना के पैर पकड़ लिए और अपने पुत्र को मन्दिर आदि का कार्य भार सौंपकर हिमालय की तरफ चले गए। उस धौला कुआँ गाँव में धन्ना जाट का मन्दिर आज भी विद्यमान है और उस गाँव वालों को धन्ना वंशी कहते हैं। गुरु ग्रन्थ साहिब में भी धन्ना जाति की कथा है और उस गाँव में गुरुद्वारा है, मन्दिर भी है जो आज भी है। जब हम भगवान का भोग लगाने जाते हैं, हम जल्दी से ही बाहर आ जाते हैं। भगवान कहते है जो मुझे प्रेमपूर्वक भोग लगाता है मैं उसे स्वीकार करता हूँ।

9.27

यत्करोषि यदश्नासि, यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय, तत्कुरुष्व मदर्पणम्।।9.27।।

हे कुन्तीपुत्र ! (तू) जो कुछ करता है, जो कुछ भोजन करता है, जो कुछ यज्ञ करता है, जो कुछ दान देता है (और) जो कुछ तप करता है, वह (सब) मेरे अर्पण कर दे।

विवेचन: श्रीभगवान कहते हैं, हे अर्जुन! जो तू करता है, जो कुछ तू खाता है, जो हवन करता है, जो दान देता है और जो तप करता है, वह सब मुझको अर्पण कर दे।

अर्जुन के प्रश्न का भगवान फिर से उत्तर देते हैं। संन्यास योग ज्ञान मार्गियों के हेतु है किन्तु यहाँ भगवान भक्ति मार्गी को संन्यासी कहते हैं। जिसने अपने सभी कर्म भगवान को अर्पण कर दिये, उसका फल उसे नहीं मिलता और इसलिए उसका फल भी भगवान स्वीकार कर लेते हैं।

हम, "**ॐ कृष्णार्पणम अस्तु "** कहते हैं किन्तु हम फल का त्याग
नहीं करते। जब हम उस कर्म को भगवान को अर्पण करते हैं, जब कर्म ही अर्पण कर दिया तो फल मेरा कैसे? लेखा ही नहीं

मेरा तो उस लेखे (Account) के पैसे कैसे मेरे? सप्तम अध्याय के अट्ठारहवें श्लोक में भगवान ने यही बात कही, वह ज्ञानियों के लिए कही किन्तु यहाँ भक्त के लिए कही। केवल गेरुवां वस्त्र पहनकर संन्यास लेने को नहीं कहा भगवान ने, बल्कि जो अपने सारे कर्मों को मुझे अर्पण कर देता है वह संन्यासी है। इस प्रकार जो करता है, वह संन्यास योग से युक्त आत्मा है।

9.28, 9.29

शुभाशुभफलैरेवं(म्), मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः।
सन्न्यासयोगयुक्तात्मा, विमुक्तो मामुपैष्यसि।।9.28।।
समोऽहं(म्) सर्वभूतेषु, न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां(म्) भक्त्या, मयि ते तेषु चाप्यहम्।।29।।

इस प्रकार (मेरे अर्पण करने से) कर्म बन्धन से और शुभ (विहित) और अशुभ (निषिद्ध) सम्पूर्ण कर्मों के फलों से (तू) मुक्त हो जायगा। ऐसे अपने सहित सब कुछ मेरे अर्पण करने वाला (और) सबसे सर्वथा मुक्त हुआ (तू) मुझे प्राप्त हो जायगा।
मैं सम्पूर्ण प्राणियों में समान हूँ। (उन प्राणियों में) न तो कोई मेरा द्वेषी है (और) न कोई प्रिय है। परन्तु जो प्रेमपूर्वक मेरा भजन करते हैं, वे मुझ में हैं और मैं भी उनमें हूँ।

विवेचन: इसमें भगवान ने बहुत विशेष बात कही। भगवान ने कहा, वैसे तो सारे भूत मेरे द्वारा ही रचित हैं किन्तु जो भक्त मुझको अत्यन्त प्रेम से भजते हैं वे मुझ में और मैं भी उनमें प्रत्यक्ष रूप से प्रकट हूँ और इसलिए हमारे यहाँ सन्तों में भगवान के दर्शन की परम्परा है। हम गुरु का पूजन, सन्तों का पूजन भगवान मान कर करते हैं क्योंकि उनमें ईश्वर प्रत्यक्ष रूप से प्रकट हो जाते हैं। उनकी भक्ति से भगवान उनमें प्रत्यक्ष प्रकट दिखते हैं। वे गुरु में, सन्तों में भगवान का स्वरूप देखते हैं और हमें वास्तव में वैसी ही अनभूति होती है।

9.30

अपि चेत्सुदुराचारो, भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः(स्), सम्यग्व्यवसितो हि सः।।9.30।।

अगर (कोई) दुराचारी से दुराचारी भी अनन्य भक्त होकर मेरा भजन करता है (तो) उसको साधु ही मानना चाहिये। कारण कि उसने निश्चय बहुत अच्छी तरह कर लिया है।

विवेचन: श्रीभगवान ने इस श्लोक में यह बात स्पष्ट रूप से कही कि जो दुराचारियों में भी सबसे बड़ा दुराचारी है, जिसने अनेक जन्मों में भी दुराचार ही किये हैं, ऐसा कोई अतिशय दुराचारी भी अनन्य भाव से मेरी भक्ति करने लगे तो उसे साधु मानना चाहिए। यदि अब वह स्थाई रूप से ईश्वर भजन में समर्पित है, तो उसे सदाचारी मानना चाहिये। वह दृढ निश्चय वाला है।

9.31

क्षिप्रं(म्) भवति धर्मात्मा, शश्वच्छान्तिं(न्) निगच्छति।
कौन्तेय प्रतिजानीहि, न मे भक्तः(फ्) प्रणश्यति।।9.31।।

(वह) तत्काल (उसी क्षण) धर्मात्मा हो जाता है (और) निरन्तर रहने वाली शान्ति को प्राप्त हो जाता है। हे कुन्तीनन्दन ! मेरे भक्त का पतन नहीं होता (ऐसी तुम) प्रतिज्ञा करो।

विवेचन: भगवान कहते हैं कि हे अर्जुन! निश्चित ही वह धर्मात्मा हो जाता है और सदा रहने वाली शान्ति को प्राप्त होता है। मैं शपथ लेता हूँ कि मेरे भक्त का नाश नहीं होता।

9.32

मां(म्) हि पार्थ व्यपाश्रित्य, येऽपि स्युः(फ्) पापयोनयः।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रा:(स्), तेऽपि यान्ति परां(ङ्) गतिम्।।9.32।।

हे पृथानन्दन ! जो भी पाप योनि वाले हों (तथा जो भी) स्त्रियाँ, वैश्य और शूद्र (हों), वे भी सर्वथा मेरे शरण होकर निःसन्देह परमगति को प्राप्त हो जाते हैं।

विवेचन: यह बहुत महत्त्वपूर्ण श्लोक है और भ्रामक भी है। इसका बहुत लोग दुरुपयोग भी करते हैं, आइए इसे समझते हैं। हे अर्जुन! स्त्री, वैश्य, शूद्र, पाप योनि आदि जो भी हों, मेरी शरण में आकर परम गति को प्राप्त करते हैं।

अब कुछ लोगों को बड़ी आपत्ति होती है। स्वतन्त्रता की अभिव्यक्ति का जमाना है तब भी भगवान ने स्त्री, वैश्य, शूद्र, चाण्डाल, पशु को इस श्रेणी में डाला है। जिसका तात्पर्य है कि भगवान ने प्राणिमात्र के सम्बन्ध में ऐसा कहा है और उनके लिए रास्ता खोल दिया है जो भेद-भाव की बात करते हैं। ऐसा प्राचीन काल में भी रहा होगा।

ब्राह्मण ने अपना अधिकार हमेशा से सिद्ध किया और हम लोग हमेशा से देखते आए हैं और स्वीकार भी किया है। क्षत्रियों में राजर्षि हुए हैं जिसे भगवान अगले श्लोक में कहेंगे लेकिन ऐसा बहुत लोग समझते हैं कि स्त्रियों को भगवत् प्राप्ति का अधिकार नहीं है और अपने पति की सेवा करना ही बहुत है। उसे गुरु बनाने की जरूरत नहीं है, वैश्य को भी जरूरत नहीं है और शूद्र को भी उसकी जरूरत नहीं है।

भगवान कहते हैं, स्त्री, वैश्य, शूद्र और यहाँ तक पशु भी (गजेन्द्र जिसकी कथा सभी जानते हैं), जो भी मेरी स्तुति करेगा, उसमे कोई बाधा नहीं कर सकता, निषेध नहीं कर सकता। जो भी इस तरह का भ्रम फैलाते हैं उसका भगवान ने खण्डन किया। उन्होंनें (ब्राह्मण, क्षत्रियों की तो सबको मालूम है) जो भी अन्य लोग जिनका नाम वर्गीकृत कर दिया गया, जैसे- स्त्री, वैश्य, शूद्र, चाण्डाल, पशु, सभी प्राणिमात्र को अपनी भक्ति करने का अधिकार दे दिया है।

9.33

किं(म्) पुनर्ब्राह्मणाः(फ्) पुण्या, भक्ता राजर्षयस्तथा।
अनित्यमसुखं(म्) लोकम्, इमं(म्) प्राप्य भजस्व माम्।।9.33।।

(जो) पवित्र आचरण वाले ब्राह्मण और ऋषिस्वरूप क्षत्रिय भगवान् के भक्त हों, (वे परम गति को प्राप्त हो जायँ) इसमें तो कहना ही क्या है। (इसलिये) इस अनित्य (और) सुखरहित शरीर को प्राप्त करके (तू) मेरा भजन कर।

विवेचन: भगवान कहते हैं, जो पुण्यशील ब्राह्मण हैं, जो राजर्षि हैं, ऐसे लोग मेरी शरण में आकर परम गति को प्राप्त होते हैं। यह बात पहले से ही सबको पता है। तू पाण्डु कुल में जन्मा है, तू राजर्षि का पुत्र है इसलिए सुख रहित और क्षणभङ्गुर इस मनुष्य शरीर को प्राप्त होकर मेरा निरन्तर भजन कर। गीता के अध्याय अट्ठारह के छ्यासठवें श्लोक को गीता जी का अन्तिम वाक्य माना जाता है, वहाँ पर छ्यासठवां श्लोक भगवान के द्वारा कहा गया अन्तिम श्लोक है ।

9.34

मन्मना भव मद्भक्तो, मद्याजी मां(न्) नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवम्, आत्मानं(म्) मत्परायणः।।9.34।।

(तू) मेरा भक्त हो जा, मुझमें मन वाला हो जा, मेरा पूजन करने वाला हो जा (और) मुझे नमस्कार कर। इस प्रकार अपने-आपको (मेरे साथ) लगाकर, मेरे परायण हुआ (तू) मुझे ही प्राप्त होगा।

विवेचन: यहाँ पर अट्ठारहवें अध्याय के पैसठवें श्लोक और इस अध्याय के चौंतीसवें श्लोक की पहली पङ्क्ति समान है। जो बात भगवान ने इस श्लोक में कही है वही बात अध्याय अट्ठारह के पैसठवें श्लोक में कही। तू मुझमें मन लगाने वाला हो, मेरा

पूजन कर, मुझको प्रणाम कर। इस प्रकार आत्मा को मुझ में नियुक्त कर मेरे ही परायण होकर तू मुझको ही प्राप्त करेगा।

यहाँ माम् का अर्थ समझना होगा। जब यहाँ माम् कहते हैं तो, इसका मतलब कृष्ण का पूजन कर, कृष्ण की भक्ति कर, ऐसा नहीं कह रहें हैं। महाभारत में कुल एक लाख श्लोक हैं, वेदव्यास जी ने जहाँ भी कृष्ण भगवान की चर्चा की है, उनको वहाँ वासुदेव उवाच, कृष्ण उवाच, केशव उवाच करके की है। महाभारत के कुल अट्ठारह पर्वों में एक लाख श्लोक के भीष्म पर्व के पच्चीस से बयालीसवें अध्याय अर्थात् कुल अट्ठारह अध्याय को, जिसे श्रीमद्भगवत गीता कहा गया, केवल इन्हीं अट्ठारह अध्यायों में वेदव्यास जी ने श्रीभगवानुवाच कहा और अन्यत्र सभी स्थानों पर महाभारत में कृष्ण उवाच, केशव उवाच, वासुदेव उवाच कहा है क्योंकि गीता में बोलते तो कृष्ण हैं किन्तु वहाँ कृष्ण भाव से नहीं बोलते अपितु परब्रह्म भाव से बोलते हैं, इसलिए जिसके इष्ट राम हैं, कृष्ण हैं, शिव हैं, माता हैं, वही भाव "माम्" को यहाँ अपनी प्रतिष्ठा बताते हैं।

भगवान ने इसमें अपनी प्राप्ति का सुगम उपाय बतला दिया।
भगवत् प्राप्ति कब हो जायेगी ऐसा मन में जब आता है तब हमारा मन परमेश्वर के अलावा कहीं नहीं लगता। इष्ट में उसी को देखते हैं, जो करते हैं उसके लिये करते हैं, उसी को प्रणाम करते है। "**वासुदेव सर्वमिति**", अर्थात् सबमें उस ईश्वर का ही निवास है, सब में ईश्वर को देखकर प्रणाम करते हैं तो ईश्वर की प्राप्ति हो जाती है।

इस प्रकार राजविद्याराजगुह्ययोग अध्याय का विवेचन यहीं समाप्त होता है।

प्रश्नोत्तर:

प्रश्नकर्ता: जेपी शर्मा भैया

प्रश्न: देवलोक और ब्रह्मलोक में क्या अन्तर है? ब्रह्म लोक की कामना करते हैं क्या? ब्रह्म लोक से वापस आते हैं क्या?

उत्तर: ब्रह्मलोक ब्रह्मा जी का लोक है, देवलोक सभी देवताओं के अलग-अलग लोक हैं। लोग ब्रह्मलोक की कामना करते हैं, लोग वहाँ से वापस भी आते हैं, किन्तु वहाँ पहुँचने वाले का निवास बहुत लम्बी अवधि का होता है। स्वर्गलोक से ब्रह्मलोक का काल लाखों गुना अधिक है, किन्तु वहाँ की भी सीमा है, उसे लौट कर मृत्यु लोक में तो आना ही पड़ेगा। ब्रह्मलीन होने का तात्पर्य ब्रह्मलोक नहीं है। उसका तात्पर्य परमपिता परमेश्वर से है।

प्रश्नकर्ता: सुनील भट भैया

प्रश्न: देवता और भगवान में क्या अन्तर है?

उत्तर: देवता योनि है, मनुष्य रूप में अच्छे कर्म किये तो देवलोक में जाते हैं। देवलोक की आयु सैंकड़ों गुना, हज़ारों गुना, लाखों गुना से भी ज़्यादा है। स्वर्ग लोक भी अनेक हैं, हम वहाँ देवता बन जाते हैं। इन देवताओं की हम उपासना करते हैं, वे हमारी भौतिक इच्छाओं की पूर्ति करते हैं। हम पूजन न भी करें तो भी वे हमारा भरण-पोषण करते हैं। इन देवताओं के द्वारा पूरे ब्रह्माण्ड का सञ्चालन भगवान करते हैं। देवता भी मरण-धर्मा योनि है। इनको भी एक समय के पश्चात् आयु पूरी करके अपने शरीर को छोड़ना पड़ता है। भगवान ही अन्तिम सम्पूर्ण शक्ति है इसलिये अन्तिम उपासना भगवान की ही है। हमें देवताओं का पूजन अवश्य करना चाहिए क्योंकि उनका हमारे ऊपर ऋण है, संसार में अन्न-जल उन्हीं की कृपा से प्राप्त होता है।

प्रश्नकर्ता: कमलेश भैया

प्रश्न: अध्याय नौ के सत्रहवें श्लोक का अर्थ क्या है?

पिताहमस्य जगतों, माता धाता पितामह:।

वेद्यं पवित्रमोंकार, ऋक्साम यजुर्वेद च।।

उत्तर: भगवान ने कहा कि मैं ही जगत् को धारण करने वाला माता, पितामह हूँ, मैं ही जानने योग्य हूँ, मैं ही पवित्र ओङ्कार हूँ। मैं ही ऋग्वेद, सामवेद एवं यजुर्वेद हूँ। जिसकी ऋचाएँ नियत मात्रा की होती हैं वह ऋग्वेद कहा जाता है, जिसे गाया ज़ा सकता हैं उन्हें सामवेद कहा जाता है, जो अनियत मात्रा की हैं उन्हें यजुर्वेद का जाता है। जिनमें संसार की चौंसठ कलाओं का वर्णन है वह अथर्ववेद कहलाता है, जैसे भवन बनाना, भोजन बनाना आदि आदि। इस प्रकार से वेद की ऋचाओं को चार भागों में विभाजित किया गया है, यहाँ पर अथर्ववेद को भगवान ने इसलिये नहीं कहा क्योंकि उसमें सांसारिक विषयों का वर्णन है।

प्रश्नकर्ता: उर्मिल शर्मा दीदी

प्रश्न: भगवान के अन्तिम चरण तक भक्ति का योग क्या है? अपने अन्दर साकार-निराकार दोनों भक्ति होनी चाहिए या एक?

उत्तर: साकार-निराकार अलग नहीं है, जब वह साकार रूप में दिख गया तो साकार है और जब निराकार तेज रूप में अनुभव हुआ तो निराकार है। ब्रह्म तो एक ही है। राम, कृष्ण, शिव सब एक ही हैं। नाशवान जीवों में मेरा अस्तित्त्व नहीं रहता, मेरा अस्तित्त्व होने पर वह अविनाशी हो जायेगा, तब वह मरेगा नहीं, बूढ़ा नहीं होगा। हम किसी मार्ग से जायें, पहुँचना परब्रह्म तक ही है, मुख्य बात यह है कि मेरी निष्ठा संसार से छूट गयी। भगवान में लग गई।

प्रश्नकर्ता: वन्दना दीदी

प्रश्न: क्या भगवान से यह कहना सही है कि काम पूरा हो जाने पर हम ये चढ़ावा चढ़ायेंगे?

उत्तर: हाँ एकदम ठीक है, भगवान ने ही कहा है कि **परस्पर भावयन्तम्, श्रेय: परमवाप्स्यथ।** भगवान ने ही घोषणा की है कि देवतागण तुम्हारी आहुतियों से प्रसन्न होते हैं और वे प्रसन्न होकर वर प्रदान करते हैं, किन्तु हमेशा ही यही करना उचित नहीं है।

प्रश्नकर्ता: रीता दीदी

प्रश्न: मन, चित्त और आत्मा ये एक दूसरे से कैसे भिन्न हैं?

उत्तर: मन और चित्त अलग बात है, आत्मा अलग बात है। जैसे हमारा स्थूल शरीर है वैसा ही सूक्ष्म शरीर भी है। स्थूल शरीर को हम देखते हैं, सूक्ष्म शरीर अर्थात अन्त: करण चतुष्टय। इसके चार विभाग हैं-जब यह सङ्कल्प-विकल्प करता है तो मन कहलाता है, जब यह निर्णय करता है तो बुद्धि कहलाता है, जब यह धारणा करता है तो चित्त कहलाता है, जब यह अपने होने की स्वानुभूति करता है तो अहम् कहलाता है। रात्रि में मैं गहरी नींद सोया यह जानने वाला कौन है, अहम् तत्त्व उसको जानता है। स्थूल शरीर एवम् सूक्ष्म शरीर दोनों को धारण करने वाला जीवात्मा है। स्थूल शरीर एवम् सूक्ष्म शरीर दोनों मरते हैं किन्तु वह चैतन्य कभी नहीं मरता। वह परमात्मा का अंश है जो विद्यमान रहता है, अगली योनियों में जाता है।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(यूँ) योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे राजविद्याराजगुह्ययोगो नाम नवमोऽध्याय:।।

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'राजविद्याराजगुह्ययोग' नामक नवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||